भारतीय संस्कृति एवं इसके विमर्श के विविध आयाम

डॉ0 वीरेन्द्र सिंह यादव,

अध्यक्ष–हिन्दी एवं अन्य भारतीय भारतीय भाषा विभाग, डॉ.शकुन्तला मिश्रा राष्ट्रीय विश्वविद्यालय, मोहान रोड, लखनऊ(उ0 प्र0),226017

महात्मा गाँधी ने संस्कृति के संबन्ध में कहा था कि '' मैं नहीं चाहता कि मेरे घर में सभी दिशाओं में (बन्दीगृह की–सी) दीवारें हों और मेरी खिड़कियाँ बंद रखी जाएँ। मैं चाहता हूँ कि सभी देशों की सांस्कृतिक हवाएँ मेरे घर के अंदर मुक्त रूप से प्रवेश और विचरण करें। लेकिन मुझे यह कतई स्वीकार नहीं कि उनके प्रभाव में मेरे पैर ही अपनी धूरी से उखड़ जाएँ।.....मेरा ऐसा धर्म नहीं जो मेरे घर को कैदखाना बना दे।''[1]

भारतीय संस्कृति और सभ्यता की सम्पूर्णता अपने आपमें अद्वितीय है। विभिन्न संस्कृतियों के समागम के कारण भारत में विविध सांस्कृतिक अस्मिताएं पाई जाती हैं। विविधता में एकता भारतीय संस्कृति की विशेषता रही है। आरंभ से ही विद्वानों–चिंतकों ने भारतीय संस्कृति के वैशिष्ट्य पर प्रकाश डाला है। कहा गया कि यह संस्कृति सामाजिक संस्कृति है। इसमें सभी की समाविशता है सभी को समुचित स्थान प्रदान किया गया हैं। भारतीय संस्कृति की महत्वपूर्ण विशेषता है –वसुधैव कुटुम्बकम् (पूरी पृथ्वी ही अपना परिवार है) सत्यमेव जयते न अनृतम् (सत्य की जीत होती है, असत्य की नहीं), विद्वान सर्वत्र पूज्यते (विद्वान की सर्वत्र पूजा होती है), यत्रनार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता (जहाँ नारियों की पूजा होती है वहाँ देवता निवास करते हैं), सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामया (सभी सुखी हों सभी नीरोग हों) । ये सभी आर्ष वाक्य भारतीय संस्कृति के वैशिष्ट्य को ही निरूपित करते हैं। यहॉ धर्म, संस्कृति का मूल आधार माना जाता है। धर्म का प्रभाव संस्कृति के प्रत्येक पक्ष पर पड़ा। बाह्य रूप में संस्कृतियॉ सदैव एक दूसरे को प्रभावित करती आई है। अतः किसी संस्कृति विशेष का मूल रूप स्पष्ट नहीं होता है । भारत की पृथक सांस्कृतिक विकास इसकी भौगोलिक स्थिति का परिणाम है। उत्तर में विस्तृत एवं उच्च पर्वत शिखर और दक्षिण में समुद्र इसे शेष विश्व से पृथक करता है। साथ ही उत्तर पश्चिम के पहाड़ी दर्रों से सीमित सांस्कृतिक सम्पर्क भी सुलभ हुआ है। हिमालय से निकली नदियों द्वारा निर्मित मैदान भारतीय संस्कृति का केन्द्र बिन्दु रहा है। इसी मैदान में पहले हड़प्पा संस्कृति और फिर आर्य संस्कृति पल्लवित हुई । इस मैदान की उत्पादकता ने यहॉ के निवासियों को संस्कृति के विविध पक्षों धर्म, साहित्य कला, स्थापात्य , नृत्य , संगीत, सामूहिक पर्व एवं त्योहार के विकास के लिये समय और संसाधन उपलब्ध कराए।

समय–समय पर संस्कृति को परिभाषित करने का उपक्रम भी होता रहा हैं। संस्कृति हमारे मूल्यों , आदर्शों और संस्कारों का समुच्चय है। किसी भी देश की संस्कृति उस देश की गौरवशाली परम्परा का प्रतिनिधित्व करती है तथा मानवीय जीवन को स्पंदित भी करती है। यहॉ प्रश्न उठता है कि मूल्य और संस्कार क्या है? मूल्य शब्द 'मूल+यत्'[2] से निष्पन्न होता है, जिसका अभिप्राय है किसी वस्तु के विनिमय में दिया जाने वाला धन , दाम , बाजार भाव आदि। यह मूल्य का सीधा या अभिधात्मक अर्थ है। आधुनिक युग में मूल्य सिर्फ इसी अर्थ तक सीमित नही है, वरन् इसका अर्थ विस्तार हुआ है।

इसी प्रकार संस्कार को परिभाषित करते हुए कहा गया है। ' संस्कारों हि गुणान्तराधानम्उच्यते '[3] अर्थात जो हमारे अन्दर गुणों का आधान करे ,वही संस्कार है। संस्कार का अर्थ शोधन से भी लिया जाता है।

संस्कृति शब्द अंग्रेजी के Culture के पर्याय के रूप में प्रयुक्त होता रहा हैं। परंतु तत्वतः वह Culture का पर्याय नहीं है। क्योंकि कल्चर विज्ञान के उन प्रयोगों के लिए व्यवहृत होता है जो कृषि जीवाणु संवर्धन आदि में किए जाते हैं। इस प्रकार संस्कृति शब्द का उपयोग इतने अर्थों एवं संदर्भों में होता आ रहा है कि उसकी एक समुचित परिभाषा देना दुष्कर नहीं तो कठिन अवश्य हो गया है। क्योंकि संस्कृति इन साधारण एवं शब्दगत बाह्य अर्थों से बिल्कुल अलग मानव चेतना का ऐसा विकासक्रम है, जो उसके अंतरंग एवं बहिरंग पक्ष को परिष्कृत करके विशेष जीवन पद्धति का सृजन करती है। उदाहरण के लिए आज के इस घोर वैज्ञानिक युग में हमसे कोई कहे कि हम आपको चन्द्रमा में पहुँचा देंगे, लेकिन गौरीशंकर शिखर को हमें डाइनामाइट से उड़ा देने दीजिए। आप हमें अपना हिमालय दे दीजिए, गंगा यमुना दे दीजिए। हम आपको मंगल ग्रह में पहुंचा देंगे। तो क्या हम इसे स्वीकार करेंगे? कभी नहीं। क्योंकि इससे हमारा रागात्मक सम्बंध है। इनके बिना हम वैसे ही होंगे जैसे प्राण के बिना शरीर। दूसरों के लिए भले ही यह भौगोलिक विस्तार का एक अंग हो लेकिन हमारे लिए आदिदेव भगवान शिव की तपस्थली और आदि पुरूष भागीरथ की निरंतर साधना से आहूत संसार सागर से मुक्ति प्रदान करने वाली मुक्तिदायिनी माँ है।

संस्कृति शब्द का प्रयोग अनेक अर्थों में किया गया है। और अनेक भारतीय एवं पाश्चात्य विद्वानों ने इस पर अपने विचार भी व्यक्त किए हैं । शब्दकोष उलटने पर इसकी अनेक परिभाषाएं मिलती है जिसमें किसी बड़े लेखकों एवं विद्वानों का कहना है कि ''संसार भर में जो भी सर्वोत्तम बातें जानी या कही गई हैं, उनसे अपने आप को परिचित करना संस्कृति हैं।'' क्रोबर एवं क्लुखौन ने संस्कृति की परिभाषाओं का संकलन कर बताया है कि इस शब्द की एक सौ आठ परिभाषाएँ हैं। साहित्यकारों ने सामाजिक आकर्षण एवं बौद्धिक श्रेष्ठता को प्रकट करने के लिए संस्कृति शब्द का प्रयोग किया है। प्रसिद्ध आलोचक एवं कवि मैथ्यू अर्नोल्ड जीवन के प्रकाश एवं कोमलता को संस्कृति कहते हैं। कई समाजशास्त्रियों ने समाज के बौद्धिक नेताओं के लिए 'सांस्कृतिक अभिजात्य (Cultural elite) शब्द का प्रयोग किया है। दार्शनिक केसिरर एवं सोरोकिन तथा मैकाइवर जैसे समाजशास्त्री मानव की नैतिक, आध्यात्मिक और बौद्धिक उपलब्धियों के लिए संस्कृति शब्द का प्रयोग करते हैं। राबर्ट बीरस्टीड ने ' द सोशल आर्डर ' में संस्कृति को परिभाषित करते हुए लिखा है–''संस्कृति एक व्यवस्था है जिसमें हम जीवन के प्रतिमानों , व्यवहार के तरीकों , बहुत से भौतिक और अभौतिक प्रतीकों , परम्पराओं , विचारों सामाजिक मूल्यों , मानवीय क्रियाओं और आविष्कारों को सम्मिलित करते है।''[4] टूलर के अनुसार :–''संस्कृति वह जटिल समग्रता है जिसमें ज्ञान, विज्ञान, कला, आचार, कानून, प्रथा तथा ऐसी ही अन्य क्षमताओं और आदतों का समावेश रहता है। जिन्हें समाज प्राप्त करता है।''[5] संस्कृति एक विशेष प्रकार की जीवन शैली होती है, जो समाज में पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरित होती है। समाज भर में जो सर्वोत्तम बातें कही या जानी जाती हैं, उनसे अपने आपको परिचित कराना संस्कृति है। ''संस्कृति शारीरिक या मानसिक शक्तियों का प्रशिक्षण, दृढ़ीकरण या विकास अथवा उसमें उत्पन्न अवस्था है। यह मन, आचार अथवा विचारों की परिस्कृति या शुद्धि है।''[6]

इस संदर्भ में डा0 रामविलास का कथन है कि, ''संस्कृति एक व्यापक शब्द है। उसके

अन्तर्गत मनुष्य का आचरण, उसका भावजगत्, विचारधारा, साहित्य, कला, विज्ञान– ये सभी आ जाते हैं। ब्रह्म की तरह संस्कृति व्यक्त और अव्यक्त दोनो हैं। वाल्मीकि और व्यास के महाकाव्य, अजन्ता और एल्लोरा का शिल्प, स्थापत्य और चित्रकारी, त्याग राय और तानसेन का संगीत ये सब संस्कृति के अंग हैं और वह उल्लास जो दीपावली के प्रकाश में फूट पड़ता है, वह शूरता जो 1857 और 1946 के विद्रोहों में प्रकट हुई थी, शान्ति और न्याय का वह प्रेम जो आज कोटि–कोटि भारतीय जनता को सोवियत और चीन के साथ विश्व शांति की रक्षा के लिए आगे बढ़ा रहा है, यह सब भी संस्कृति का अंग है। अपने सुदीर्घ जीवन में मनुष्य ने ऐसी सांस्कृतिक निधि अर्जित की है जो मानव मात्र की सम्पत्ति है। बच्चों से प्यार, नारी जाति का सम्मान, मनुष्य मात्र की समानता का भाव आदि सम्पूर्ण मानव–संस्कृति की थाती हैं।''[7]

रामधारी सिंह दिनकर ने लिखा है कि –''सभ्यता और संस्कृति –ये दोनों दो शब्द हैं और इनके मायने भी अलग–अलग होते हैं। सभ्यता मनुष्य का वह गुण है जिससे वह आपकी बाहरी तरक्की करता है। संस्कृति मनुष्य का वह वह गुण है जिससे वह अपनी भीतरी उन्नति करता है। दया, भाषा और परोपकार सीखता हैं।...एक कहावत है कि सभ्यता वह चीज है जो हमारे पास है लेकिन संस्कृति वह गुण है जो हममें छिपा हुआ है। ''[8] कुल मिलाकर संस्कृति पर बात करने का मतलब बनता है, मनुष्य के जीवन पद्धति या जीने के ढंग पर बातचीत करना, परिवेश में शामिल मूर्त रूपों (प्रस्तुत और मानव निर्मित दोनों) और मूल्यों पर बात करना। जीवन जीने की पद्धति या फिर संस्कृति के भीतर मनुष्य के समग्र जीवन को शामिल करने की बात पर सबकी अपनी–अपनी राय है और इसी हिसाब से विश्लेषण पद्धति भी। लेकिन संस्कृति के मूर्त रूपों पर भी कम विवाद नहीं है। इससे जुड़े कई सवाल सामने आते हैं।

जहाँ तक संस्कृति की बात है तो मुक्तिबोध ने लिखा है –''जीवन जैसा है उसे अधिक सुन्दर उदात्त और मंगलमय बनाने की इच्छा आरम्भ से ही मनुष्य में रही है। यही इच्छा जब सामाजिक स्तर पर रूप लेती है, तब वह संस्कृति कहलाती है, जिसके अंतर्गत धर्म, नीति, कला, साहित्य, संगीत आदि आते हैं। संस्कृति समाज की मूल जीवनदायिनी शक्ति है, राजनैतिक शक्ति से भी अधिक। भारतीय समाज इसका प्रमाण है। राजनैतिक दासता सदियों रही, पर संस्कृति की शक्ति के कारण यह जाति जीवित रही और विकास करती गयी।''9

निर्मल वर्मा जी ने भी बड़े ही दार्शनिक अंदाज में संस्कृति चिंतन और गाँधीवादी दृष्टिकोण को शाश्वत और पवित्र माना है और आधुनिक साहित्यिक मानदंडों को स्थापित किया है। इतिहासकार संस्कृति का सम्बन्ध किसी समूह के जीवन की उन्नत उपलब्धियों से मानते हैं। संस्कृति की मानवशास्त्री परिभाषा टायलर ने दी है। उनके अनुसार '' संस्कृति वह मिश्रित परन्तु सम्पूर्ण व्यवस्था है जिसनें ज्ञान , विश्वास , कला , आचार , कानून , प्रथा तथा इसी प्रकार की ऐसी सभी क्षमताओं और आदतों का समावेश रहता है। जिन्हें मनुष्य समाज का सदस्य होने के नाते प्राप्त करता है।''[10]

मूर्धन्य मनीषी और प्रतिष्ठित इतिहासकार डॉ. गोविन्दचन्द्र पाण्डेय कहते हैं ''Culture is the social expression of value-seeking and history is its process''[11] लब्धप्रतिष्ठ समाजशास्त्री राधाकमल मुखर्जी के अनुसार ''मूल्य समाज स्वीकृत इच्छाएं तथा लक्ष्य हैं जिनका अंतरीकरण सीखनें या प्रमितिक अधिमान्यताएँ मान तथा अभिलाषाएँ बन जाती हैं। ''[12]

इस प्रकार संस्कृति की भारतीय पृष्ठभूमि निर्मित होती है, वहीं निरूक्तकार यास्क ने 'सम्+कृ+ति' के रूप में समेकित भाव का सर्वव्यापीकरण किया है। इसकी व्याप्ति साहित्य में

भी है, जिसे आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने गहरे आत्मबोध के रूप में व्यक्त किया है। उन्होने इसे सृजनात्मक प्रक्रिया के तहत नियोजित करते हुए कहा है कि, ''प्राकृतिक शाक्तियों का यदृच्छा (मनमाना) संयोजन विकृति है और सामाजिक संयोजन संस्कृति है।'' बकौल द्विवेदी जी का कथन है कि, '' असंयत प्रकृति का नाम ही विकृति है और संयत प्रकृति का नाम संस्कृति।''[13] कहना न होगा कि भूख लगना प्रकृति है, छीन झपटकर खाना विकृति है और मिल बांटकर खाना संस्कृति है। नदी की प्रकृति है ऊपर से नीचे की ओर बहना, खारे सागर में मिलकर विकृत हो जाना। लेकिन जब यही अधोगामिनी धारा उद्गोन्मुख होती है, हिमालय की ओर मुड़ती है तब धारा नहीं बनती राधा बन जाती है। काशी की उत्तरवाहिनी गंगा इसलिए महत्वपूर्ण समझी जाती है कि वह तद्भवी या कहें अपकर्षी प्रकृति नहीं रहती। संस्कृति बन जाती है।''[14]

हर्ष काबिद्ज के अनुसार–'संस्कृति मनुष्य का सीखा हुआ व्यवहार है, अर्थात् वे चीजें जो वे करते हैं, और वह सब जो सोचते हैं, संस्कृति है।' संस्कृति की सार्थकता इसमें है कि वह पदार्थ को मानवीय व्यक्तित्व के गुणों से सम्पन्न कराती है इसीलिए इसकी पहचान मानवीय है। मानवीय जीवन मूल्यों एवं क्रिया–कलापों के फलस्वरूप इसकी चेतना रोमांटिक है। डा0 वासुदेव शरण अग्रवाल का कथन है कि, ''संस्कृति मनुष्य के भूत, वर्तमान और भावी जीवन का सर्वांगपूर्ण प्रकार है। हमारे जीवन का ढंग हमारी संस्कृति है। संस्कृति हवा में नहीं रहती है, उसका मूर्त्तमानरूप होता है। जीवन के नानाविध रूपों का समुदाय ही संस्कृति है।'' इसी संदर्भ में डा0 नामवर सिंह ने 'दूसरी परंपरा की खोज' में उल्लेख किया है कि, ''संस्कृति का चिंतन करने वाले किसी भी विद्वान के सामने यह बात स्पष्ट होनी चाहिए कि संस्कृतियाँ प्रभाव ग्रहण करती हैं, अपने अनुभव को समृद्धतर बनाती हैं; लेकिन यह प्रक्रिया मिश्रण की नहीं है। संस्कार नाम ही इस बात को स्पष्ट कर देता है।''[15] इसी संदर्भ में डा0 द्विवेदी लिखते हैं कि, ''मनुष्य की श्रेष्ठ समाधनाएँ ही संस्कृति है।'' सभ्यता का आन्तरिक प्रभाव संस्कृति है। सभ्यता समाज की वाह्य व्यवस्थाओं का नाम है, संस्कृति व्यक्ति के अन्तरविकास का। सभ्यता की दृष्टि वर्तमान की सुविधा–असुविधाओं पर रहती हैं। सभ्यता बाध्य होने के कारण चंचल है, संस्कृति आन्तरिक होने के कारण स्थायी।

संस्कृति' शब्द का मूल अर्थ है साफ करना या परिष्कृत करना। नृ विज्ञान के अनुसार संस्कृति समस्त सीखे हुए व्यवहार अथवा उस व्यवहार का नाम है, जो सामाजिक परम्परा से प्राप्त होता है। इस अर्थ में संस्कृति को सामाजिक प्रथा का पर्याय भी कहा जा सकता है। संस्कृति मानवीय आन्तरिकता का विकास है। इस प्रकार संस्कृति का विकास आन्तरिक एवं वाह्य दोनों स्तरों पर होता है। अतः संस्कृति किसी जाति, समुदाय, समाज और राष्ट्र की आत्मा होती है। इस प्रकार मनुष्य के क्रियाकलाप सांस्कृतिक चेतना के मूल बिन्दु है। वस्तुतः सृष्टि चक्र में मनुष्य ही सांस्कृतिक, ऐतिहासिक प्रतिक्रियाओं का मूल आधार है। मनुष्य ही स्वयं नियोक्ता और भोक्ता है।

भारतीय संस्कृति के अन्तर्गत समाज के आर्थिक, धार्मिक तथा राजनैतिक व्यवस्था का प्रवाह गतिमान रहता है। संस्कृति वस्तुतः व्यक्ति और समाज के मानसिक विकास का परिचायक है। लोक–चेतना इसी संस्कृति से उपजती है, यह चेतना निरन्तर प्रवाहमान नदी की तरह उसे जीवन से अनुप्राणित करती है। लोक कलाकारों में भी वह चेतना अजस्र वेग से प्रवाहित होकर लोक–संस्कृति से अपना अन्तर्संबंध स्थापित करती है। ग्राम्य–जीवन का दूसरा नाम ही लोक–कला है। मैले वस्त्रों में लिपटे ग्रामीणजनों में जीवन और समाज के प्रति चेतना की शक्ति हिलोरे मारने लगती है। ऐसे ही कलाकार क्रांतिकारी

प्रवृत्ति के होते हैं और विश्व में अपनी सांस्कृतिक चेतना के माध्यम से समकालीन समाज की अनेकानेक स्थितियों को प्रतिबिम्बित भी करते रहते हैं। यही चेतना उनकी शक्ति है, यही कलाकार मानव जाति को सच्चे अर्थों में उत्कर्ष कराते हैं।

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। अतः मानव सभ्यता में संस्कृति जीवन की सबसे बड़ी वास्तविकता है क्योंकि इसके माध्यम से मानव सोचने–समझने और सामान्य–विशेष में अंतर करने की शक्ति प्राप्त करता है। युग–युग से संस्कृति, विचार, कर्म और आचरण का यथार्थ है। कारण स्वरूप प्रत्येक व्यक्ति अपनी परम्परा और संस्कृति के अनुसार आचरण करता है और इसी के अनुरूप हमें एक ऐसा संस्कार मिलता है, जिनके द्वारा एक निश्चित दिशा में कार्य करना संभव हो पाता है। हमारे अनुभवों, विचारों के प्रभावस्वरूप एक लोक–चेतना जागृति होती है फलस्वरूप हमारे सांस्कृतिक अवदान भी अनवरत परिवर्तित होते रहते हैं। प्रसिद्ध विचारक मैथ्यू आर्नाल्ड का कथन कि, ''मनुष्य अपनी आवश्यकताओं को पूर्ण करने में जिन साधनों और यंत्रों का प्रयोग करता है वह सभी संस्कृतियों के अंग हैं। संस्कृति में जिन भौतिक, अभौतिक वस्तुओं का समावेश होता है, उसको भी हम संस्कृति के क्षेत्र में गिनते हैं।''

भारतीय संस्कृति का धर्म हमेशा से मनुष्य और सृष्टि के अखंडित संबंध–सार्वभौमिक संपूर्णता के आदर्श पर आधारित रहा है। पिछली शताब्दियों में एक भारतीय जिस अनुपात में आधुनिक होता गया है, उसी अनुपात में संपूर्णता का संस्कार हमारे जीवन में धुँधला और मलिन पड़ता गया है। हम एक अजीब आत्मकुंठा और अपराध–भाव से ग्रस्त हो गये हैं, क्योंकि एक तरफ हम ऐसी संस्कृति के प्रतिनिधि होने का दावा करते हैं, जो जीवन में संपूर्णता का स्वप्न पालती है, दूसरी तरफ आधुनिक युग की मान्यताओं से भी एकीकृत होना चाहते है, जो संपूर्णता के इस आदर्श को दिन–पर–दिन अधिक खोखला बनाती जाती है। हम जिस आदर्श में विश्वास करते हैं उसे अपने जीवन और कर्म में क्रियान्वित करने का साहस नहीं जोड़ पाते और जिन आधुनिक मर्यादाओं को सैद्धांतिक रूप से अस्वीकार करते हैं, उसे अपने व्यवहार और कर्म में ढालते जाते हैं। कथनी और करनी के इस भेद के कारण ही यह अपराध–भावना, यह पाप–बोध उत्पन्न होता है, जिसने न केवल हमारे राष्ट्रीय जीवन के जीवनदायी स्रोतों को सुखा दिया है, बल्कि हमारी चेतना की गहनतम परतों में अपना घर बना दिया है।''[16]

नैतिक दृष्टि से संस्कृति का सम्बन्ध नैतिकता, सच्चाई, ईमानदारी, आदर्श नियमों एवं सद्गुणों से है। संस्कृति का सम्बन्ध 'सत्यम् शिवम् सुन्दरम्' से है। हीगल, काण्ट एवं लॉबेल आदि ने संस्कृति का नीतिशास्त्रीय अर्थ में प्रयोग किया है। इस अर्थ में संस्कृति का सम्बन्ध उन वस्तुओं से है जो मानव जीवन को आनन्द प्रदान करती हैं, जो सुन्दर हैं, जो ज्ञान से सम्बन्धित है, जो सत्य है और मानव के लिए कल्याणकारी एवं मूल्यवान है। नीतिशास्त्र में संस्कृति शब्द का प्रयोग धार्मिक एवं नैतिक गुणों से युक्त आचरण के लिए किया जाता है। आदर्श रूप में संस्कृति उन नैतिक मूल्यों का समूह है जो एक समाज धारण करता है और उनके अनुरूप स्वयं को ढालने का प्रयास करता है, जो उसके सामाजिक ढाँचों, उसके सदस्यों के व्यवहार, रूचियों, भावनाओं, दृष्टिकोण और उनके द्वारा सृजित भौतिक वस्तुओं की विशिष्टताओं में अभिव्यक्त होती है। अर्थात संस्कृति ही समाज को एक रूप, एक ढाँचा प्रदान करती है और विश्व में कोई समाज अपनी विशिष्टताओं, अपनी संस्कृति के आधार पर ही पहचाना जाता है। सामूहिक संस्थाओं यथा राज्य, समाज आदि, सामूहिक सृजन या ज्ञान यथा कला, विज्ञान इत्यादि और उनकी ठोस अभिव्यक्तियों यथा इमारतों, चित्रों

आदि को साकार रूप देने में संस्कृति की महती भूमिका है। जैसे प्राचीन भारत में गण राज्यों के अस्तित्व से उस समय की लोकतान्त्रिक संस्कृति का भान होता है। इसी प्रकार मुगल कालीन इमारतें मुगल संस्कृति की ठोस अभिव्यक्ति के साथ–साथ में एक प्रकार की समासिक संस्कृति को भी व्यक्त करती हैं। अतः संस्कृति एक ऐसी वृहद अवधारणा है जो व्यक्ति के भौतिक, मानसिक, आध्यात्मिक, नैतिक एवं सामूहिक चरित्र पर अपना व्यापक प्रभाव छोड़ती है।

वस्तुतः महात्मा गाँधी जिन सांस्कृतिक हवाओं का अपने घर में आह्वान कर रहे थे वह सामाजिक समरसता की बात थी, वह चाहते थे कि दुनिया के देश एक–दूसरे के आर्थिक रूप से ही नहीं बल्कि सांस्कृतिक रूप से भी सहयोगी बनें। ताकि दुनिया वसुधैव कुटुम्बकम् एवं सर्वे भवन्तु सुखिना, का मंदिर बन सके न कि बाजारवाद की मण्डी। भारतीय संस्कृति को बाजारवाद की मण्डी के परिप्रेक्ष्य में देखने परखने से पहले आवश्यक है कि एक नजर संस्कृति पर डाला जाय। '' संस्कृति शब्द का उद्गम संस्कार शब्द से है। संस्कार का अर्थ वह क्रिया है, जिससे वस्तु के मल (दोष) होकर वह शुद्ध–सिद्धि साधक बनती है – अतः संस्कृति का अर्थ वह शिक्षा–दीक्षा है जिससे मनुष्य का जीवन सुधरे। अतः किसी देश या जाति को संस्कृति का अर्थ उस देश या जाति की वे पुरानी आदतें, प्रथाएँ, रहन–सहन आदि हैं, जो उस देश या जाति के मनुष्यों का चरित्र निर्माण करती है या उस निर्माण में प्रभावशाली होते हैं।''[17]

कुछ लोगों का यह आरोप कि भारत की स्थानीय संस्कृतियों की सतही विशिष्टताओं के उभार के कारण हमारी राष्ट्रीय संस्कृति के आधारभूत तत्व गुम होते जा रहे हैं, परन्तु यह भी सत्य है कि लोकतांत्रिक मूल्यों के इस युग में किसी भी समूह के अस्तित्व को अधिक देर तक नजर अन्दाज नहीं किया जा सकता और न ही तमाम संस्कृतियों को एक मानक राष्ट्रीय संस्कृति के ढांचे में समायोजित किया जा सकता है। समय की आवश्यकता है कि हम राष्ट्रीय लक्ष्यों और उद्देश्यों के आलोक में भारत के परम्परागत सांस्कृतिक चरित्र का आलोचनात्मक विश्लेषण करें।

सहायक संदर्भ–ग्रंथ

1. महात्मा गाँधी / यंग इण्डिया / 01 जून 1921
2. संस्कृत हिन्दी कोश–आप्टे वाभन शिवराय, पृ. 815
3. द फ्रांटियर्स ऑफ सोशल साइंस–मुकर्जी और वीसिंह, पृ. 23
4. .संस्कृति दर्शन–डॉ. हिम्मत सिंह सिन्हा, पृ. 2
5. सभ्यता और संस्कृति –योगेश अटल
6. भारत का सामाजिक विकास, –पं. जवाहर लाल नेहरू
7. शर्मा डॉ0 रामविलास–मार्क्सवाद और प्रगतिशील साहित्य, अरूणोदय प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण : 1994, पृष्ठ–252
8. रामधारी सिंह दिनकर–भारत की सांस्कृतिक कहानी, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, संस्करण–1999 पृ.1–2
9. गजानन माधव मुक्तिबोध, भारत : इतिहास और संस्कृति, राजकमल प्रकाशन, संस्करण 2009, पृ0–13
10. संस्कृति दर्शन–डॉ. हिम्मत सिंह सिन्हा, पृ. 5
11. The Meaning and Process of Culture G.C. Pandey, Page 10
12. द फ्रांटियर्स ऑफ सोशल साइंस,–मुकर्जी और वीसिंह, पृ. 23
13. हजारी प्रसाद द्विवेदी ग्रंथावली,8–हजारी प्रसाद द्विवेदी,राजकमल प्रकाशन प्रा0लि0, नई दिल्ली, संस्करण : 2007, पृष्ठ–299

14. साहित्य अमृत',संपादक, त्रिलोकीनाथ चतुर्वेदी, दिसम्बर 2008, वर्ष 14, अंक 5, पृष्ठ–38
15. सिंह नामवर–दूसरी परम्परा की खोज,तीसरी आवृत्ति : 2000,राजकमल प्रकाशन ,प्रा0लि0, नई दिल्ली,,उप0, पृष्ठ–87
16. साहित्य अमृत',संपादक, डॉ0 लक्ष्मीमल्ल सिघंवी, दिसम्बर 2005, वर्ष 11, अंक 5, पृष्ठ–45
17. डॉ. डी.एस.बघेल–'सामाजिक नियंत्रण और सामाजिक परिवर्तन, पुष्पराज प्रकाशन रीवा, संस्करण 1982–83, पृष्ठ–479